खेल
जैनेन्द्र कुमार
अन्ताक्षरी
• कहानी माला 18

खेल

● जैनेन्द्र कुमार

शाम का समय....गंगा के बेजान किनारे पर एक बालक और एक बालिका अपने को और सारे विश्व को भूल, गंगातट के बालू और पानी को अपना एकमात्र सगा बना, उनसे खिलवाड़ कर रहे थे।

प्रकृति इन निर्दोष बच्चों को चुपचाप और एक टक देख रही थी। बालक कहीं से एक लकड़ी लाकर पानी को छटा-छट उछाल रहा था। पानी मानो चोट खाकर भी बालक से दोस्ती जोड़ना चाह रहा था। बालिका अपने एक पैर पर रेत जमाकर थोप-थोपकर एक भाड़ बना रही थी।

बनाते-बनाते भाड़ से बालिका बोली, ''देख ठीक नही बना, तो मैं तुझे फोड़ दूँगी।'' फिर बड़े प्यार से थपका-थपकाकर उसे ठीक करने लगी। सोचती जाती थी —उसके ऊपर मैं एक कुटी बनाऊँगी—वह मेरी कुटी होगी। और मनोहर?.... नही, वह कुटी में नही रहेगा, बाहर खड़ा-खड़ा भाड़ में पत्ते झोंकेगा। जब वह हार जायेगा, बहुत कहेगा, तब में उसे अपनी कुटी के भीतर ले लूँगी।

बालिका सोच रही थी—मनोहर कैसा अच्छा है, पर वह दंगई बड़ा है। हमें छेड़ता ही रहता है। अबके दंगा करेगा, तो हम उसे कुटी में साझी नहीं करेंगे। साझी होने को कहेगा, तो उससे शर्त करवा लेंगे, तब साझी करेंगे। बालिका सुरबाला सातवें वर्ष में थी। मनोहर कोई दो साल उससे बड़ा था।

बालिका को अचानक ध्यान आया—भाड़ की छत तो गरम होगी। उस

पर मनोहर रहेगा कैसे? मैं तो रह जाऊँगी। पर मनोहर तो जलेगा। फिर सोचा—उसे मैं कह दूँगी भाई, छत बहुत तप रही है, तुम जलोगे, तुम मत जाओ। पर वह अगर नहीं माना? मेरे पास वह बैठने को आया ही—तो? मैं कहूँगी—भाई ठहरो, मैं ही बाहर आती हूँ....पर वह मेरे पास आने की ज़िद करेगा क्या ?.....ज़रुर करेगा, वह बड़ा हठी है।....पर मैं उसे आने नहीं दूँगी। बेचारा तपेगा—भला कुछ ठीक है! ज्यादा कहेगा, मैं धक्का दे दूँगी, और कहूँगी—अरे, जल जायेगा मूर्ख! यह सोचने पर उसे बड़ा मजा-सा आया, पर उसका मुहँ सूख गया। उसे मानो सचमुच ही धक्का खा कर मनोहर के गिरने का मज़ेदार और करुण नज़ारा सच होता दिखाई पड़ रहा था।

बालिका ने दो-एक पक्के हाथ भाड़ पर लगा कर देखा—भाड़ अब बिलकुल बन गया है। माँ जिस सावधानी के साथ अपने नवजात शिशु को बिछौने पर लेटाने को छोडती है, वैसे ही सुरबाला ने अपना पैर धीरे-धीरे भाड़ के नीचे से खींच लिया! इस काम में वह सचमुच भाड़ को पुचकारती-सी जाती थी। उसके पैर ही पर तो भाड़ टिका है, पैर का सहारा हट जाने पर बेचारा कहीं टूट न पड़े! पैर साफ़ निकालने पर भाड़ जब ज्यों-का-त्यों टिका रहा, तब बालिका एक बार खुशी से नाच उठी।

बालिका एकबारगी ही बेवकूफ मनोहर को इस अनोखे, चतुरता से पूर्ण भाड़ के दर्शन के लिए दौड़कर खींच लाने को बेचैन हो गई। मूर्ख लड़का पानी से उलझ रहा है, यहाँ कैसी ज़बर्दस्त कारगुज़ारी हुई है—सो नहीं देखता! ऐसा पक्का भाड़ उसने कहीं देखा भी है!

पर सोचा—अभी नहीं; पहले कुटी तो बना लूँ। यह सोच कर बालिका ने रेत की एक चुटकी ली और बड़े धीरे से भाड़ के सिर पर छोड़ दी।

फिर दूसरी, फिर तीसरी, फिर चौथी। इस तरह चार चुटकी रेत धीरे-धीरे छोड़ कर सुरबाला ने भाड़ के सिर पर अपनी कुटी तैयार कर ली।

भाड़ तैयार हो गया। पर पड़ोस का भाड़ जब बालिका ने पूरा-पूरा याद किया, तो पता चला एक कमी रह गई। धुआँ कहाँ से निकलेगा? तनिक सोचकर उसने एक सींक टेढ़ी करके उसमें गाड़ दी। बस ब्रह्माण्ड का सबसे सम्पूर्ण भाड़ और विश्व की सबसे सुन्दर वस्तु तैयार हो गई।

वह उस उजड्ड मनोहर को इस अद्‌भुत कारीगरी का दर्शन करावेगी, पर अभी ज़रा थोड़ा देख तो और ले। सुरबाला मुहँ बनाये आँखें स्थिर करके इस भाड़-श्रेष्ठ को देख-देखकर चकित भी हुई और खुश भी। परमात्मा कहाँ विराजते हैं, कोई इस बाला से पूछे, तो वह बताये इस भाड़ के जादू में।

मनोहर अपनी 'सूरी-सूरो-सुर्री' की याद कर पानी से नाता तोड़, हाथ की लकड़ी को भरपूर जोर से गंगा की धारा में फेंक कर जब मुड़ा, तब श्रीसुरबाला देवी एकटक अपनी परमात्मलीला के जादू को बूझने और सुलझाने में लगी हुई थी।

मनोहर ने बाला की ओर देखा—श्रीमती जी बिलकुल अपने भाड़ में अटकी हुई हैं। उसने जोर से लात मारकर भाड़ का काम तमाम कर दिया।

न जाने क्या क़िला फ़तह किया हो, ऐसे गर्व से भरकर बेरहम मनोहर चिल्लाया -''सुर्रो रानी!''

सुर्रो रानी खामोश खड़ी थी। उन के मुँह पर जहाँ अभी एक खुशी थी, वहाँ अब एक शून्य फैल गया। रानी के सामने एक स्वर्ग आ खड़ा हुआ था। वह उन्हीं के हाथ का बनाया हुआ था और वह एक व्यक्ति

को अपने साथ लेकर उस स्वर्ग की एक-एक सुन्दरता को दिखलाना चाहती थीं। हा, हन्त! वही व्यक्ति आया और उसने एक लात से उसे तोड़-फोड़ डाला! रानी को समझ न आया कि वह क्या करे।

हमारे विद्वान पाठकों में से कोई होता, तो उन मूर्खो को समझाता—यह संसार जल का बुलबुला है, फूटकर किसी रोज जल में ही मिल जायेगा। उसमें दुःख क्या और सुख क्या। री, मूर्खा लड़की, तू समझ! किसलिए बेकार में दुःखी हो रही है? रेत का तेरा भाड़ दो दिन का मेहमान—आखिर रेत में मिल जाएगा। इस पर अफसोस मत कर, इससे शिक्षा ले। परमात्मा तुझे नई सीख देना चाहते हैं। इस शिक्षा को समझ और परमात्मा तक पहुंचने की कोशिश कर। आदि-आदि।

पर बेचारी बालिका का दुर्भाग्य, उसकी मदद के लिए गंगातट पर कोई नहीं पहुंच सका। अगर कोई पंडित पहुंच कर उपदेश देने भी लगते, तो वह उनकी बात को न सुनती और न समझती। पर, अब तो वहाँ अपराधी मनोहर के सिवा कोई नहीं है। उसका मन न जाने कैसा हो रहा है। कोई जैसे उसे भीतर-ही-भीतर मसोसे डाल रहा है। लेकिन उसने बनकर कहा, ''सुरो, दुत पगली! रूठती है?''

—सुरबाला वैसी ही खड़ी रही।

—''सुरी, रूठती क्यों है?''

—बाला तनिक न हिलीं।

—''सुरी! सुरी!....ओ सुरो!''

अब बनना न हो सका। मनोहर की आवाज में कँप-कँपी थी।

सुरबाला एक ओर मुँह फेरकर खड़ी हो गई। मनोहर की आवाज़ की कम्पन का सामना शायद उससे न हो सका।

—''सुरी...ओ सुरिया! मैं मनोहर हूँ....मनोहर!......मुझे मारती नहीं!''

यह मनोहर ने उसके पीठ पीछे से कहा और ऐसे कहा, जैसे वह प्रकट करना चाहता है कि वह रो नहीं रहा है।

''हम नहीं बोलते।'' बालिका से बिना बोले रहा न गया। उसका भाड़ शायद स्वर्गविलीन हो गया। उसका स्थान और बाला की सारी दुनिया का स्थान, काँपती हुई मनोहर की आवाज ने ले लिया।

मनोहर ने बड़ा बल लगाकर कहा,''सुरी, मनोहर तेरे पीछे खड़ा है। वह बड़ा दुष्ट है। बोल मत, पर उस पर रेत क्यों नहीं फेंक देती, मार क्यों नहीं देती! उसे एक थप्पड़ लगा—वह अब कभी कसर न करेगा।''

—बाला ने कड़ककर कहा, ''चुप रहो जी।''

—''चुप रहता हूँ, पर मुझे देखोगी भी नहीं?''

—''नहीं देखते।''

—''अच्छा मत देखो। मत ही देखो। मैं अब कभी सामने न आऊँगा, मैं इसी लायक हूँ।''

—''कह दिया तुम से, तुम चुप रहो। हम नहीं बोलते।''

—बालिका का क्रोध तो कब का पिघलकर बह चुका था। यह कुछ और ही भाव था। यह एक खुशी थी जो बनावटी गुस्से का रूप धर रही थी। दूसरे शब्दों में यह स्त्रीत्व था।

मनोहर बोला,''लो सुरी, मैं नहीं बोलता। मैं बैठ जाता हूँ। यहीं बैठा रहूँगा। तुम जब तक न कहोगी, न उठूँगा, न बोलूँगा।''

मनोहर चुप बैठ गया। कुछ ही देर बाद हारकर सुरबाला बोली—''हमारा भाड़ क्यों तोड़ा जी? हमारा भाड़ बना के दो।''

''लो अभी लो।''

—''हम वैसा ही लेंगे।''

—''वैसा ही लो, उससे भी अच्छा।''

—''उसपै हमारी कुटी थी, उसपै धुएँ का रास्ता था।''

—''लो, सब लो। तुम बताती जाओ, मैं बनाता जाऊँ।''

—''हम नहीं बताएँगे तुमने क्यों तोड़ा? तुमने तोड़ा तुम्हीं बनाओ।''

—''अच्छा, पर तुम इधर देखो तो।''

—''हम नहीं देखते, पहले भाड़ बना के दो।''

मनोहर ने एक भाड़ बना कर तैयार किया। कहा, ''लो, भाड़ बन गया।''

—''बन गया?''

—''हाँ।''

—''धुँए का रास्ता बनाया? कुटी बनाई?''

—''लो कैसे बनाऊँ—बताओ तो।''

—''पहले बनाओ, तब बताऊँगी।''

—भाड़ के सिर पर एक सींक लगाकर और एक-एक पत्ते की ओट लगाकर कहा, ''बना दिया।''

—तुरन्त मुड़कर सुरबाला ने कहा,''अच्छा दिखाओ।''

—'सींक ठीक नहीं लगी जी', 'पत्ता ऐसे लगेगा' आदि-आदि संशोधन कर चुकने पर मनोहर को हुक्म हुआ—

—''थोड़ा पानी लाओ, भाड़ के सिर पर डालेंगे।''

—मनोहर पानी लाया।

गंगाजल से अपने छोटे हाथों द्वारा वह भाड़ का अभिषेक करना ही चाहता था कि सुरो रानी ने एक लात से भाड़ के सिर को चकनाचूर कर दिया!

सुरबाला रानी हँसी से नाच उठीं। मनोहर जोर से कहकहा लगाने लगा। उस बेजान जगह में वह निर्मल बच्चों के हँसने की ध्वनि गूँजने

लगी। सूरज महाराज बालकों जैसे लाल-लाल मुँह से गुलाबी-गुलाबी हँसी हँस रहे थे। गंगा मानो जान-बूझकर किलकारियाँ मार रही थी। और वे लम्बे ऊँचे-ऊँचे समझदार पेड़ विद्वान पण्डितों की तरह, अपनी गम्भीरता को भूल उस हँसी में लीन हो गए।

एक आशीर्वाद

जा,
तेरे स्वप्न बड़े हों
भावना की गोद से उतरकर
जल्द पृथ्वी पर चलना सीखें
चाँद–तारों सी अप्राप्य सच्चाइयों के लिए
रूठना मचलना सीखें
हँसें/मुस्कराएँ/गाएँ
हर दिये की रोशनी देखकर ललचाएँ
ऊँगली जलायें
अपने पाँवों पर खड़े हों।
जा,
तेरे स्वप्न बड़े हों।

● *दुष्यन्त कुमार*

खेद है कि पिछले अंक ''प्रमुख के नाम पत्र'' में मूल अनुवादक का नाम गलत छप गया है। कृप्या उसे सरला मोहन लाल पढ़ा जाये।

साथियो,

आपको अन्ताक्षरी का ये अंक कैसा लगा? इसके बारे में अपने विचार और सुझाव जल्द से जल्द भेजें।

आपके जवाब के इन्तजार में--
शिवसिंह नयाल, अनीता
'अलारिप्पु'
बी-६/६२, पहली मंजिल, सफदरजंग इन्कलेव,
नई दिल्ली-११००२९, दूरभाष : ६०६३२७

ज्योति लेजर टाइपसेटिंग
३/१ ईस्ट गुरुअंगद नगर, दिल्ली-६१